सबला

वर्ष 4 : अंक 1 | सेवाग्राम विकास संस्थान, नई दिल्ली | अप्रैल-मई, 1991

संगठन हमारी जान है मिलकर हम तूफान हैं

इस अंक में

हमारी बात

हमने महिला दिवस मनाया — 3
—सुहास कुमार

राजस्थान में बालिका विकास अभियान — 7
—कमला भसीन

इंसाफ की रोशनी — 9
—वीणा शिवपुरी

बाधाओं को तोड़ती अनुसूया — 11

बीमारी की राजनीति — 12
—वीणा शिवपुरी

गर्भपात से जुड़ी कानूनी जानकारी — 14
—सुहास कुमार

बस्ती की औरतों ने नाटक बनाया—
कौन है इसका जिम्मेदार — 18
—सबला संघ

मददगार हाथ—शक्तिशालिनी — 23

सांप्रदायिक दंगों का महिलाओं पर असर — 25
—समता ग्राम सेवा संस्थान की रपट

लड़ाई एक लड़की की — 27
—सुहास कुमार

कविताएं— — 28
—ऋषि मोहन श्रीवास्तव
—ह० चट्टोपाध्याय — 29

प्रेरकों ने लिखा है — 30

पाठकों के सुझाव — 31

एक प्रश्न — 32
—प्रमोद गहलौत

चित्रांकन
तापोसी घोषाल (मुख्य पृष्ठ)
दीपा दोंदे
विदिया थापर

सहयोग मंडल

कमला भसीन

सुहास कुमार

वीणा शिवपुरी

ज्ञानेंद्र प्रसाद जैन

'जागोरी' समूह

प्रतिभा गुप्ता

ग्रामीण बहनों की द्विमासिक पत्रिका—शिक्षा विभाग, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा अनुदानप्रदत्त; डाक्टर शारदा जैन (सेवाग्राम विकास संस्थान, 1 दरियागंज, नई दिल्ली-110 002) द्वारा संपादित व प्रकाशित तथा इन्द्रप्रस्थ प्रेस (सी.बी.टी.), नेहरू हाउस, 4 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 में मुद्रित।

हमारी बात

देश के हर राजनैतिक दल ने अपने चुनाव घोषणा-पत्र में ज़ोर डाला है कि महिलाओं को राजतंत्र में पूरी हिस्सेदारी मिले। ये वादे थोथे ही रहेंगे जब तक इन पर पूरा अमल नहीं होता। अमल तभी होगा जब महिलाएं स्वयं आगे बढ़ कर अपना अधिकार मांगेंगी। 'सबला' की पाठक जानती हैं कि जहां-जहां महिला-समूह सशक्त बने, वहां-वहां उन्होंने अधिकारों की मांग की और उन्हें हासिल किया। अधिकार चाहे जमीन के पट्टे का हो या समान काम, समान मज़दूरी का या संपत्ति में औरत के हिस्से का।।

'सबला' के माध्यम से हम बहनों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाती आई हैं। व्यवहार में अनेक विसंगतियां हैं जिन्हें पुलिस या अदालतों के माध्यम से दुरुस्त करवा लेना अकेली महिला के बस की बात नहीं। इसके लिए संगठित होने की ज़रूरत है। हमारा अनुरोध है कि 'सबला' पढ़ने वाली बहनें इस दिशा में पहल करें। अपने आस-पड़ोस में महिला संगठन बनाएं और अन्याय की चंगुल में फंसी बहन की मदद करें।

मिसाल के तौर पर कोई पुरुष अपनी पत्नी को छोड़कर दूसरा ब्याह रचाने की जुगाड़ करता है। महिला संगठन उस ब्याह को रुकवाएं। लड़की के पिता को बताएं कि दूसरा ब्याह अवैध होगा जब तक पहले में कानूनी तालाक न मिल जाए। बात न बनती दीखे तो थाने में रिपोर्ट लिखाएं और ज़रूरी हो तो पुरुष को अदालत के कटघरे में ला खड़ा करें।

दूसरी मिसाल। आपकी जानकारी में कोई जुल्मी पुरुष अपनी पत्नी को पीटता है या अन्य तरह से सताता है तो आप उस दुखी स्त्री को सहारा दें। गुजरात के गांवों में औरतों ने मिलकर उन शराबी पुरुषों का सामना किया जो घर लौटकर पत्नियों को पीटते थे।

लड़कियों की पढ़ाई-लिखाई के बारे में भी यही कहना है। जो मां-बाप लड़कियों को स्कूल नहीं भेजते आप उन्हें समझाएं कि लड़की के लिए भी पढ़ाई उतनी ही ज़रूरी है जितनी लड़के के लिए। पढ़-लिख कर लड़की की समझ बढ़ेगी और वह अपने पैरों पर खड़ी हो सकेगी।

सामाजिक सुविधाएं भी औरतें एकजुट होकर ही पुरुष-वर्ग से पा सकेंगी। यह सुविधा चाहे दूर-दराज़ से पानी ढो कर लाने के बारे में हो या घुटन भरी कोठरी में खाना बनाने की। पुरुषों ने न तो पानी लाना है और न ही धुआं भरी कोठरी में खाना बनाना है। वे औरत का दर्द न समझते हैं, न समझने की कोशिश करते हैं।

ऐसी छोटी-बड़ी अनेक मुश्किलें हैं जिन्हें पीढ़ी-दर-पीढ़ी औरतें भुगतती आई हैं, पर उफ़ नहीं करतीं।

ज़माना नई करवट ले रहा है। औरतों को भी अपनी ज़िंदगी सुधारनी होगी। कुछ नए कानून भी बने हैं जो उनके हक में हैं। उनका फायदा उठाने के लिए पहला कदम है कानूनों की जानकारी लेना। अगला

कदम है संगठित हो कर हकों की मांग करना। तीसरा कदम, उन्हें पाने के लिए संघर्ष करना। आपको शायद लगे कि नई लीक बनाने में औरतें कामयाब नहीं हो पाएंगी। यह तभी तक है जब तक आप अपने को कमज़ोर मानती रहेंगी। ऐसी कई मिसालें हैं जहां औरतों ने संगठित हो कर साबित कर दिया है कि वे सरकार से लोहा ले कर अपनी बात मनवा सकती हैं। उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों का 'चिपको आंदोलन', अहमदाबाद (गुजरात) में पटरी पर साग-सब्जी बेचने वाली औरतों का संगठित आंदोलन बहुत प्रभावशाली रहे हैं।

आप भी अपने क्षेत्र में नई मिसाल बना सकती हैं।

संपादिका

हमने महिला दिवस मनाया

सुहास कुमार

महिला दिवस हमेशा मिली-जुली भावनाओं के साथ आता है। हमारे दिलों में हर्ष, उल्लास, उत्साह के साथ पीड़ा, क्रोध और उत्तेजना के मिलेजुले भाव शामिल रहते हैं। हर्ष, उल्लास और उत्साह इसलिए कि हम बहनें एक साथ जुड़ती हैं। अपनी समस्याओं पर गौर करती हैं। मिलकर सवालों और मुद्दों को उठाती हैं। पीड़ा, क्रोध, उत्तेजना इसलिए कि हम फिर से कड़वे अनुभवों को दोहराती हैं। मांगें रखने, प्रतिरोध करने और मुद्दों को उठाने के बावजूद लगता है कि हम वहीं के वहीं खड़े हैं।

इसमें आशा की किरण एक ही है। हमारी लड़ाई में धीरे-धीरे और बहनें जुड़ती जा रही हैं। कुछ संवेदनशील पुरुष भी जुड़े हैं।

8 मार्च '91 को दिल्ली में हम लगभग 1500 बहनें जुटीं। इसमें 20 महिला समूहों ने भाग लिया। छह सप्ताह पहले से हमने तैयारी शुरू कर दी थी। ग्यारह बजे के करीब बहनों ने दिल्ली गेट के पास पार्क में इकट्ठा होना शुरू किया। बहुत से प्लेकार्ड व बैनर मांगों और मुद्दों को लेकर बनाए।

बारह बजे के लगभग जब काफी महिलाएं इकट्ठी हो गईं तो हमारा जुलूस लाल किले की ओर चला। गीत गाते, नारे लगाते हम सब उत्साह और जोश के साथ एक बजे के लगभग वहां इकट्ठा हुए। एक-दो भाषण हुए, लेकिन ज़्यादा जोर गीतों और नाटकों पर रहा। सबला संघ की बहनों ने नाटक "कौन है इसका जिम्मेदार" प्रस्तुत किया। अल्लारिपु तथा कुछ अन्य समूहों ने बलात्कार, युद्ध और दंगों आदि से महिलाओं के जीवन पर असर को लेकर नाटक दिखाए। अपने संदेश और मांगों को लेकर हिंदी, उर्दू और अंग्रेजी में छपा एक पर्चा बांटा गया। पर्चे के कुछ अंश थे—

सांप्रदायिकता और रूढ़िवाद का बड़ा करीबी रिश्ता है। यह मिलकर हमें सदियों पीछे ढकेल देते हैं। सांप्रदायिक फूट पैदा होते ही अपनी अलग-अलग पहचान कायम करने पर जोर दिया जाता है। उसी अलग पहचान के तहत औरत की जिंदगी, उसके हक, उसके पहनने-ओढ़ने के ढंग के बारे में

कायदे व कानून थोपे जाते हैं। दंगों में हमारे घर लुटते हैं। बेरोजगारी बढ़ती है। मर्दों के आपसी झगड़ों की सजा बलात्कार और हिंसा के रूप में हमें भुगतनी पड़ती है।

आपसी एका

हमें मिली रपटों के आधार पर कुछ खबरें आप तक पहुंचाना चाहते हैं। धाड़ क्षेत्र महिला मंडल, जिला सहारनपुर ने अपना पर्चा कविता के रूप में निकाला। कुछ अंश—

"सुनो मेरे देश वालो सुनलो बहनों भाई
धर्म के ठेकेदार बन बैठे हैं कसाई
रहते हैं बंद कोठियों में भरी है इनकी तिजोरी
पुलिस और राजनीति की ओट में
करते सीना जोरी

धर्म के नाम पर करवाते हैं दंगा
कुर्सी के लिए बहाए गरीबों के खून की मांग
ये नहीं चाहते आपस में एका
एका होगा तो कैसे बजेगा इनका डंका

पर्दाफाश करना है इनका, करदो इन्हें बेनकाब
बहनों अब आगे आओ, करना है इन्हें
नाकामयाब
खुदा और ईश्वर बसते हैं दिल में
वही उनका मंदिर मस्जिद
मेहनत मजदूरी उसका धर्म और मजहब
वही पूजा, वही इबादत है

सखी मिलन

प्रगति ग्रामीण विकास समिति, नौबतपुर, पटना से पुष्पा बहन हमें लिखती हैं कि 8 मार्च को सखी मिलन के अंतर्गत हजारों की संख्या में ग्रामीण महिलाएं इकट्ठी हुईं। सांप्रदायिकता और जातिवाद के खिलाफ प्रदर्शनी, नाटक और झांकियां प्रस्तुत की गईं। उनकी रपट के कुछ अंश—

8 मार्च का दिन किसी बीती हुई लड़ाई की यादगार का त्यौहार नहीं है। यह दुनिया की आधी आबादी की आज भी जारी लड़ाई में अपने संकल्पों को नए सिरे से मजबूत कर लेने का दिन है।

सखी मिलन में सांप्रदायिकता, जातिवाद, निरक्षरता एवं गरीबी के खिलाफ संघर्ष से जुड़े कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

"जागरण का संदेश
हर सखी के दिल तक पहुंचाएं
उम्मीदों के मशाल जलाएं"

लड़ाई जारी है

दर्पण संस्थान, कोटरा मकरंदपुर, कानपुर देहात की रपट के कुछ अंश—

"आज देश के कुछ सिरफिरे कट्टर व दकियानूसी व्यक्ति धर्म के नाम पर सांप्रदायिकता की आग को भड़काने की कोशिश कर रहे हैं। हमें भ्रमित नहीं होना है। स्वयं जगे रहना है, दूसरों को जगाना है। ताकि बुनियादी बदलाव की मांग मजबूती पकड़ सके। हमें पीछे नहीं लौटना है।"

बनवासी सेवा संस्थान, पलियां कलां, उत्तर प्रदेश से अजय कुमार चौबे और भारतीय जनकल्याण एवं प्रशिक्षण संस्थान गाजीपुर से जयशंकर प्रसाद लिखते हैं कि समूहों ने 8 मार्च को गोष्ठी की, नारे लगाए और जुलूस निकाला। अभियान एक दिन तक सीमित नहीं है। लड़ाई जारी है।

मिहिजाम, दुमका बिहार से कल्याणी मीना हमें समाचार भेजती हैं—

8 मार्च का मुख्य फोकस हिंसा एवं युद्ध का असर। इनमें भी खास सांप्रदायिकता व हिंसा का मुद्दा। महिला समूह के नारे थे—

कोख के दर्द एक समान
हिंदू हो या मुसलमान

भाई भाई कट मरे
दोनों माताएं रोती फिरें

महिला संगठन ताकत बढ़ावे
सांप्रदायिकता को दूर भगावे

एकता की ताकत

सेवा कर्मी संस्थान, गाजीपुर से प्राप्त समाचारः 8 मार्च उल्लास के साथ मनाया गया। ग्रामीण महिलाओं ने जुलूस निंकाला। लोक संस्कृति पर आधारित नुक्कड़ नाटकों का मंचन किया गया। कार्यक्रम में 173 महिलाओं ने सक्रिय भाग लिया।

बंबई से "युवा" संस्था की नवतेज लिखती हैं—जागेश्वरी की महिलाओं ने एक शांतता फेरी तनावग्रस्त इलाकों से निकाली। महिलाओं ने शांतता, एकता, मानवता बनाए रखने की प्रतिज्ञा ली।

"हम जागेश्वरी 'पूर्व' की महिलाएं अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर धर्म, जात-पात, वर्ग और वर्ण के भेदभाव को भूलकर एक दूसरे का सहकार्य करेंगी। हम सब महिलाएं मिलकर मंहगाई, मार-धाड़, गुंडागिरी, नागरिक सुविधाएं, दहेज इत्यादि सभी सवालों का संगठन बना कर काम करेंगी।

"हमारी एकता को तोड़ने वाली ताकतों का एक होकर विरोध करने का हम संकल्प लेती हैं।"

महिला समाख्या समूह, टिहरी गढ़वाल से प्राप्त समाचार के अनुसार 8 मार्च वहां उत्साहपूर्वक मनाया गया। उन्होंने जुलूस निकाला, आम सभा की। उनकी आवाज थी—

चाहे जहां रहें हम
होगी नहीं एकता कम
मिलकर ज्योति जलाएंगे
महिला दिवस मनाएंगे
आओ बहनों एक हो जाएं
धर्म जाति के भेद मिटाएं

विरोधी स्वर

देवास, मध्य प्रदेश से वीणा सोनी हमें लिखती हैं— गत "8 मार्च विश्व महिला दिवस के रूप में मनाया गया। यह उत्सव मात्र उच्चवर्गीय और महानगरीय महिलाओं

का चोंचला बनकर रह गया है। गांवों एवं कस्बे की महिलाओं को इस विषय की जानकारी ही नहीं है। भारत जैसे विशाल देश का दुर्भाग्य ही यह रहा है कि यहां सदैव कोई भी आयोजन या दिवस शहरों तक सीमित रहे। गांवों तक नहीं पहुंच पाए।

इनकी बात कुछ हद तक ठीक है। लेकिन वास्तविकता यह है कि महिला दिवस के बारे में शहर की भी बहुत कम महिलाएं जानती हैं। उसकी अहमियत, उसके मनाने का मकसद उससे भी कम। इसमें किसी को पहल तो करनी ही होगी। हम में से जो महिलाएं जागरुक हैं तथा समय निकाल सकती हैं, वहीं इस दिशा में सक्रिय काम कर सकती हैं। अभी तो हमारा अभियान शहर की बस्तियों और गांवों की ज़्यादा महिलाओं को जोड़ना है। इसे चोंचला नहीं कह सकते। धीरे-धीरे यह अभियान फैलता जा रहा है।

गांवों और तथाकथित निचले तबकों के साथ बहुत से महिला संगठन काम कर रहे हैं। संघर्ष तो अभी शुरू हुआ है। शहरी और ग्रामीण दोनों ही स्तरों पर स्त्रियों को जागरुक होने की ज़रूरत है। अपनी स्थिति बेहतर बनाने के लिए सक्रिय कोशिश की ज़रूरत है। दहेज को लेकर सताई गई स्त्रियां, घर और बाहर दोनों चाकों के बीच पिसती स्त्रियां, विधवा, अकेली छोड़ी हुई औरतें, पग-पग पर दबाई, सताई विवाहित स्त्रियां, चाहे महानगर की हों या कस्बों की हों, क्या उनकी पीड़ा गांवों की स्त्रियों से कम है।

दरअसल औरतों की समस्या वर्ग से उठकर है। निदान और रास्ते अलग- अलग हो सकते हैं। खास बात है इनकी ताकत बढ़ाना, उनका आत्मविश्वास जगाना, उनको स्वयं उनका मूल्य समझाना। दूसरे हमारी कद्र करें इसके लिए पहले ज़रूरी है हम अपनी क्षमताओं और महत्व को पहचानें। □

अबला नहीं तुम सबला हो
नारी लक्ष्मी है
नारी मां बहन है
फिर पत्नी क्यों पीड़ाग्रस्त है?

पहाड़ों से पत्थर तोड़कर
परिवार को पालती
त्याग की मूर्ति को किसने जाना?
अधिकार मिले बराबर
लेकिन कोरे कागज़ पर
होंठ हिले, आंखे मुड़ीं
ताने उछले बाहर जाने पर।

साखिका टीम
अजमेर, राजस्थान

राजस्थान में बालिका विकास अभियान

कमला भसीन

पिछले पांच-छः सालों से राजस्थान के कुछ ज़िलों में महिला विकास कार्यक्रम चल रहा है। इस कार्यक्रम से महिलाओं की स्थिति में बहुत बदलाव आए हैं और औरतों की समस्याओं पर बहुत चर्चा शुरू हुई है। इस कार्यक्रम के बारे में 'सबला' में कई लेख और गीत छपे हैं।

बालिका-वर्ष 1990 में इस कार्यक्रम ने एक और ठोस क़दम उठाया। वह था बालिकाओं की स्थिति को समझने का ताकि बालिकाओं की स्थिति सुधारी जा सके। 1990 में लगभग सभी ज़िलों में बालिकाओं की समस्याओं पर बातचीत की गई, गीत और नारे बनाए गए। कई छोटे-छोटे टी.वी. प्रोग्राम भी बनवाए गए। 1990 के अंत में इस कार्यक्रम से जुड़े लोगों ने बालिका विकास के लिए एक सुनियोजित अभियान शुरू करना तय किया। उन्हें लगा कि यह समस्या इतनी जटिल है कि छुटपुट कार्यक्रमों से काम नहीं चलेगा।

राजस्थान के 17 ब्लाकों में यह अभियान शुरू किया जा रहा है। इस अभियान में नारों, गीतों, पोस्टरों, नाटकों, फिल्मों के माध्यम से बालिकाओं की समस्या पर गांव-गांव में बातचीत शुरू की जायेगी। लड़कियों के लिए बालिका-मेले लगाए जाएंगे और ज़रूरत के अनुसार कुछ ठोस कार्यक्रम शुरू किए जाएंगे। इस अभियान में खास ध्यान चार मुद्दों पर दिया जा रहा है—

बालिकाओं की सेहत और खान-पान

बालिकाओं की शिक्षा

बाल-विवाह

बालिकाओं के बारे में सामाजिक सोच

यह अभियान कोशिश करेगा कि बाल-विवाह कम किए जाएं। ज़्यादा से ज़्यादा बच्चियों को स्कूलों में भरती किया जाए। बच्चियों के स्वास्थ्य की तरफ ज़्यादा ध्यान दिया जाए और बेटे-बेटी में किए जाने वाले भेद-भाव को कम किया जाए।

जनवरी 1991 में इस अभियान की संचालिकाओं की पांच दिन की ट्रेनिंग की गई। इस ट्रेनिंग में लगभग 75 महिलाओं ने भाग लिया। अब ये महिलाएं हर ब्लाक में 50 गांवों से एक-एक महिला ले कर उनकी पांच दिन की ट्रेनिंग करेंगी। यानि 850 गांवों की महिलाओं की ट्रेनिंग होगी। फिर ये महिलाएं छोटी-छोटी टीमें बना कर 850 गांवों में एक या दो दिन के बालिका शिविर करेंगी। इन शिविरों में गांव की

औरतों, मर्दों, बच्चों के साथ बात-चीत की जाएगी। उनसे बच्चियों की हालत के बारे में पूछा जाएगा। उनसे जानकारी ली जाएगी और उन्हें जानकारी दी भी जाएगी। इस बात की चेतना जगाने की कोशिश की जाएगी कि बेटे और बेटी में फ़र्क करने से बेटी का ही नहीं, पूरे परिवार और पूरे समाज का नुकसान होता है। जगह-जगह यह संदेश पहुंचाया जाएगा कि

खुशहाल बालिका भविष्य देश का

इस अभियान के लिए राजस्थान सरकार ने काफी सामग्री तैयार की और करवाई है। एक पुस्तक छापी गई है *"हमारी बेटियां: इंसाफ के इंतज़ार में"*। एक छोटा पर्चा छापा है। एक पुस्तिका नारों और गानों की बनाई है। बहुत से पोस्टर तैयार किए हैं, बाल-विवाह पर राजस्थानी गानों के दो कैसेट बनाए हैं। गांवों में दिखाने के लिए तीन-चार वीडियो फ़िल्में भी चुनी हैं। इस कार्यक्रम में लगी साथिनों और प्रचेताओं ने कई नाटक भी बनाए हैं।

तैयारी को देख कर लगता है कि इस अभियान से ज़रूर कुछ बदलाव आएगा। राजस्थान में इस बदलाव की बहुत ज़रूरत भी है। हमें उम्मीद है कि यह अभियान सिर्फ 850 गांवों तक ही सीमित नहीं रहेगा। अब तक राजस्थान बाल-विवाह, महिला निरक्षरता, सती के लिए जाना जाता रहा है। अब राजस्थान की महिलाएं इस राज्य की तस्वीर बदलने के लिए मैदान में उतरी हैं। राजस्थान अब इन हिम्मत वाली महिलाओं के नाम से जाना जाएगा। ये महिलाऐ कह रही हैं—

क्यों अंधकार को कोसे जाएं
अच्छा है इक दीप जलाएं

□

इंसाफ की रोशनी

वीणा शिवपुरी

कुसुम पांच साल पहले ब्याह कर इस घर में आई थी। घर में पति के अलावा बस एक देवर और ससुर थे। दो ननदों की शादी हो चुकी थी। कुसुम ने आते ही सबका मन मोह लिया। कुसुम का पति राम प्रसाद डाकखाने में बाबू था। वह छोटे भाई हरी के कॉलेज की पढ़ाई का ख़र्चा देता था। पिता स्कूल की मास्टरी से रिटायर हो चुके थे। सब उन्हें मास्टर जी कहते थे। शादी के दो साल बाद कुसुम के घर चांद सा बेटा जन्मा। वह बहुत खुश थी। अब तो मुन्ना पाठशाला जाने लगा था।

एक दिन अचानक सब पर गाज गिरी। सावन में कुसुम अपने गांव आई हुई थी। राम प्रसाद उसे लिवाने आए। एक रात उन्हें छाती में ज़ोर का दर्द उठा। कुसुम ने चूरन दिया। गरम ईंट से सेंक दिया। दर्द तो बढ़ता ही गया। कुसुम का भाई डाक्टर साहब को बुलाने के लिए दौड़ा। डाक्टर साहब के आने से पहले राम प्रसाद की सांस छूट गई। कुसुम का रो-रो कर बुरा हाल हो गया।

ऐसे ही एक महीना बीत गया। ससुर और बड़ी ननद दोनों कुसुम को ही कोसते रहते। ससुर कहते—"हाय, मेरे बेटे को मार डाला।" बड़ी ननद कहती—"अभागन, हमारे भाई को खा गई।"

बेचारी कुसुम किससे अपना दुख कहती। सिर्फ कुसुम की छोटी ननद विमला प्यार के दो बोल बोलती थी। विमला ने शादी के बाद पढ़ाई

की थी। अब वह अपने गांव के स्वास्थ्य केंद्र में नौकरी करती थी।

उसने सबको समझाया—"भैया दिल के दौरे से मरे। इसमें भाभी का क्या दोष?"

बीमे की रकम

एक दिन विमला ने सुना मास्टर जी हरी से बीमे के रुपयों की बात कर रहे थे। शादी से पहले राम प्रसाद ने दस हजार रुपयों का जीवन बीमा करवाया था। उसकी मौत होने पर पैसे के हक़दार की जगह हरी का नाम दिया था। उस समय उसकी बीवी और बच्चा तो थे ही नहीं।

विमला ने कुसुम से पूछा।

विमला—भाभी, तुम्हें भैया के जीवन बीमे के बारे में कुछ मालूम है क्या?

कुसुम—नहीं जीजी, उन्होंने तो कभी मुझसे रुपये-पैसे की बात की ही नहीं।

विमला—यही तो ग़लती है। सब लोगों को अपनी पत्नियों को बीमा, बचत खाता और ज़मीन का पट्टा वग़ैरा के बारे में बता कर रखना चाहिए।

विमला—देखो भाभी, भैया के बीमे में हरी का नाम है। लेकिन उस रुपये पर अब तुम्हारा और मुन्ना का हक़ है। हरी और पिताजी तुम्हारा वह पैसा हड़पना चाहते हैं।

कुसुम चुपचाप रोने लगी। उसे मुन्ने की पढ़ाई-लिखाई की चिंता थी। पैसे की ज़रूरत थी। पर उसे नहीं मालूम था कि वह क्या करे। विमला ने तार देकर अपने पति को बुलवाया। दोनों ने मिल कर एक वकील से बात की।

वकील ने कुसुम को कानून की तरफ़ से मिले विधवा के हक़ों के बारे में समझाया। वकील ने कुसुम की तरफ़ से कचहरी में एक अरज़ी दी।

कचहरी ने हरी को पैसा देने पर रोक लगा दी। पूरे मामले की सुनवाई हुई। फैसला हुआ कि राम प्रसाद के जीवन बीमे की रक़म पर उसकी पत्नी का और बच्चे का हक़ है। रुपया कुसुम को मिल गया।

ससुर ने घर में महाभारत खड़ा कर दिया। कुसुम को खूब बुरा-भला कहा।

वे बोले, "अब तो तुम्हें रुपया मिल गया। अब हमारे घर से निकल जाओ।"

अब कुसुम नादान नहीं थी। वह अपने हक़ जानती थी।

कुसुम—"पिताजी, यह घर बाप दादा का बनवाया हुआ है। इसमें मुझे और मुन्ना को रहने का हक़ है। मैं आपके साथ झगड़ा नहीं करना चाहती। पर मेरा हक़ मुझे मिलना चाहिए।"

विमला के पति ने भी अपने ससुर को समझाया।

पिताजी आप अपने बेटे के दुख में डूबे हैं। बहू का दुख नहीं समझ रहे। आपका बेटा तो चला गया। अब कुसुम और मुन्ना आपके घर की रोशनी हैं। उन्हें संभालिए।

मास्टर जी की समझ में बात आ गई। □

अप्रैल-मई, 1991

पंडिता रमाबाई

सन 1858 में संस्कृत के पंडित अनंत शास्त्री और लक्ष्मीबाई के घर रमाबाई का जन्म हुआ था। बचपन में ही उन्होंने गीता के बहुत सारे श्लोक याद कर लिए थे। उस समय लड़कियों की पढ़ाई का चलन नहीं था। लेकिन पंडित जी ने अपनी बेटी को खूब पढ़ाया-लिखाया। उन्होंने अपने बेटी की छोटी उम्र में शादी करने से भी इनकार कर दिया। रमाबाई पढ़-लिख कर खुद पंडिता कहलाने लगीं। उनके मां-बाप के मरने के बाद वे घूम-घूम कर धार्मिक रूढ़ियों के खिलाफ प्रचार करने लगीं। वे औरतों को धार्मिक-सामाजिक बेइंसाफी और अत्याचार से मुक्त कराने की कोशिश में लग गईं।

रमाबाई ने एक और साहसिक क़दम उठाया। उन्होंने एक शिक्षित शूद्र के साथ शादी कर ली। पूना से कुछ दूर रमाबाई ने मुक्ति सदन की स्थापना की। अपने अन्त समय तक वे स्त्री मुक्ति की मशाल उठाए चलती रहीं।

बाधाओं को तोड़ती—अनुसूया

हिमाचल प्रदेश के दूर दराज के एक गांव में रहती है—अनुसूया। पहाड़ के किनारे पर उसकी छोटी सी झोपड़ी है। झोपड़ी लकड़ी के खंभों के सहारे टिकी हुई है। यह झोपड़ी देखने में भले कमज़ोर लगे, पर वास्तव में है नहीं। ध्यान से देखने पर मालूम होता है वह मज़बूती से धरती में पैर जमाए हुए है। वैसी ही है उस घर की मालकिन। देखने में छोटी, दुबली-पतली लेकिन भीतर से खूब मजबूत और बहादुर। करीब दस साल पहले उसका पति चार छोटे-छोटे बच्चे छोड़ कर चल बसा था।

रिश्तेदारों और गांव वालों ने सलाह दी—"दूसरी शादी कर लो। तुम अकेली बच्चों को नहीं पाल सकोगी। कौन तुम्हारी खेती-बाड़ी संभालेगा?"

अनुसूया ने खुद अपनी सोच से दो फैसले किए। उसने कहा—"मैं दूसरी शादी नहीं करूंगी। मैं खुद खेती करूंगी।"

पहले फ़ैसले का तो इतना नहीं लेकिन दूसरे फ़ैसले का गांव में काफी विरोध हुआ। चाहे गाँव की सभी औरतें अपने मर्दों के साथ खेती-बाड़ी का काम करती हैं, लेकिन एक अकेली औरत खेती करे यह उन्हें अच्छा नहीं लगा। सबने कहा नया-नया जोश है, चार दिन में ठंडा हो जाएगा।

मेहनत फल लाई

अनुसूया का पति आलू की खेती करता था। उसने कुछ सेब के पेड़ भी लगा दिए थे। अनुसूया ने सेब के और भी पेड़ लगाए। उन पेड़ों के बीच की ज़मीन पर दूसरी फसलें उगाईं। इस तरह से उसे दोहरी आमदनी होने लगी। अनुसूया की ज़मीन समुद्री सतह से आठ हज़ार फुट की ऊंचाई पर है। उसे खेती करने में कमर तोड़ मेहनत करनी पड़ती है। पर वह घबराती नहीं। अब उसके सेबों के बग़ीचे खूब फलने लगे हैं।

उसके घर से बच्चों का स्कूल दस किलोमीटर दूर है। बच्चों को पैदल भी जाना पड़ता है लेकिन अनुसूया ज़ोर देती है कि बच्चे पढ़ने जाएं। उसकी बड़ी बेटी अब आठवीं जमात में है। वह पढ़ने में खूब तेज़ है। लड़के अभी छोटे हैं। वह चाहती है उसकी लड़की खूब पढ़े।

अनुसूया कभी-कभी हंस कर कहती है—अगर कभी ख़राब मौसम की वजह से खेती खराब हो जाए तो लोग कहेंगे कि मैं औरत हूं इसलिए मुझे कुछ नहीं आता। पर अब मुझे उनकी चिंता नहीं।

सच्चाई यह है कि अब बहुत से गांव वाले उसका बड़ा आदर करने लगे हैं। वही लोग जो कहते थे कि तुम अकेली सब नहीं संभाल पाओगी, अब उस पर गर्व करते हैं।

सभी मानते हैं कि अनुसूया बड़े जीवट की औरत है। उसने अपने बलबूते पर अपना और बच्चों का भविष्य संवारा है। □

बीमारी की राजनीति

वीणा शिवपुरी

हमारे देश को अनाज की जितनी ज़रूरत है उससे ज़्यादा अनाज यहां उपजाया जाता है। फिर भी लाखों लोगों को दो वक्त की रोटी भी नहीं मिल पाती। हमारे देश में प्राथमिक शिक्षा मुफ्त है, फिर भी आधी जनता अनपढ़ है।

इसी तरह से हमारे देश में हर साल हज़ारों डाक्टर पढ़-लिख कर तैयार होते हैं। नये-नये स्वास्थ्य केंद्र भी खुलते हैं। फिर भी हर हज़ार बच्चों में से साठ बच्चे तो पांच बरस की उम्र से पहले ही मर जाते हैं।

ऐसा क्यों है?

अगर थोड़ा सोचें तो मालूम पड़ता है कि ग़रीबों में ज़्यादा कुपोषण है, ज़्यादा अशिक्षा है और ज़्यादा बीमारी है। यानि इन सब बातों का आपस में करीबी रिश्ता है।

सेहत के लिए ज़रूरी बातें

अच्छी सेहत के लिए दो तरह की कोशिशें ज़रूरी हैं। पहली तो यह कि बीमारी हो ही नहीं। दूसरी यह कि बीमार पड़ने पर सही समय पर सही इलाज मिले। बीमारी ना हो इसके लिए ज़रूरी है पोषक खुराक, सही समय पर रक्षक टीके और साफ़ सुथरा वातावरण। यानि घर के भीतर-बाहर सफ़ाई, अपने शरीर की सफाई, साफ़ पीने का पानी आदि। बीमार पड़ने पर हर तबके के इंसान की सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच होनी चाहिए। हम देखते हैं कि ग़रीबों के बीच आम तौर पर इन दोनों ही बातों का अभाव होता है।

गरीब मजदूर औरत और मर्द अपने कुटुंब को ताक़तवर खुराक नहीं दे पाते। उनके शरीर में बीमारी से लड़ने की ताक़त कम हो जाती है। इसलिए कोई भी बीमारी उन्हें आसानी से दबोच लेती है। बीमार पड़ने पर मज़दूरी का हर्जा कर के स्वास्थ्य केंद्र पर जाना भी मुश्किल होता है। एक-दो दिन भी मज़दूरी न मिलने का सीधा असर उनके भोजन पर होता है। इससे कमज़ोरी और बढ़ती है। यह एक ऐसा चक्र है जिससे निकलना मुश्किल होता है।

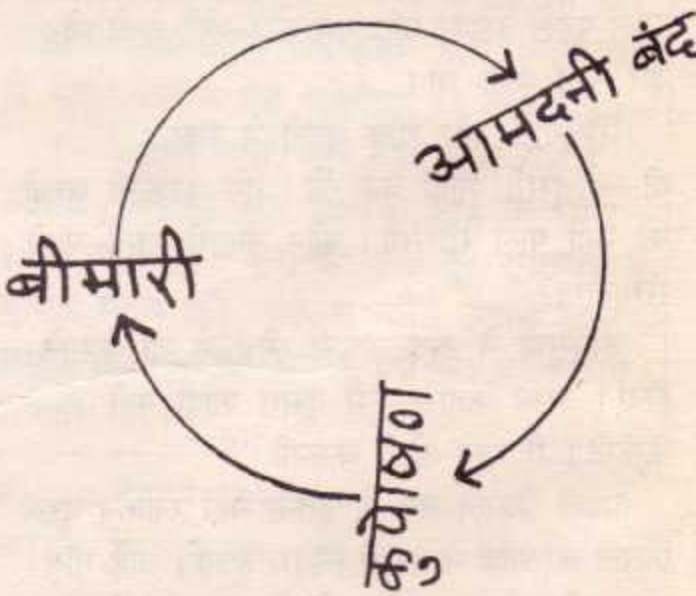

सबसे ज़रूरी बात—चेतना

इन सबसे एक बात तो समझ में आई कि सिर्फ़ स्वास्थ्य केंद्र खोल देने से लोगों की सेहत नहीं सुधरती। सबकी वहां तक पहुंच भी होनी चाहिए। उस पहुंच के लिए ज़रूरी है लोगों में चेतना। आज भी सफ़ेदपोश

कलम चलाने वाला मेहनतकश से ऊंचा समझा जाता है। ग़रीब लोग डाक्टरी सेवाओं को अपने ऊपर कृपा समझते हैं। वे उन्हें अपना हक़ समझ कर नहीं लेते।

केरल का उदाहरण

पूरे देश में केरल एक ऐसा प्रांत है जहां के आंकड़े आंखें खोल देने वाले हैं। वहां काफ़ी ग़रीबी है। उनकी फ़ी व्यक्ति औसत आमदनी देश की औसत आमदनी से काफी कम है। वहां के लोगों को देश की औसत खुराक़ से कम खुराक मिलती है। लेकिन वहां बाल मृत्यु दर देश की औसत दर से आधी से भी कम है। लड़कियों की शादी की औसत उम्र ऊंची है। साक्षरता अधिक है। यानि इन सब बातों में भी क़रीबी रिश्ता है।

बदलाव कैसे आया?

केरल में स्वास्थ्य और साक्षरता में बदलाव आने से पहले एक और बदलाव आया था। सन् 1930 के आसपास वहां खेतिहर किसानों और भूमिहीन मज़दूरों की दशा बहुत ख़राब थी। किसान और मज़दूरों ने संगठित होकर हालात बदलने के लिए जन आंदोलन चलाया। उन्होंने अपनी मज़बूत खेतिहर यूनियन बनाई। भूमि सुधार लागू किए गए। न्यूनतम मज़दूरी तय हुई। इस तरह से वहां जागरण और चेतना की लहर आई। केरल के लोगों के जीवन में बहुत बड़ा फ़र्क आया। उन्हें अपने हक़ों की जानकारी मिली। साथ ही संगठित ताकत के ज़रिए उन हक़ों को पाना सीखा। आज अगर वहां डाक्टर ठीक काम नहीं करते या ठीक दाम पर राशन नहीं मिलता तो वे चुप होकर नहीं बैठ जाते। सब लोग मिल कर हल्ला करते हैं। ऊपर के अफसरों से शिकायत करते हैं।

केरल प्रांत के उदाहरण से यह बात साबित हो जाती है कि अधिकारों के प्रति चेतना और सामूहिक शक्ति से बड़ी रुकावटें भी दूर की जा सकती हैं।

□

गर्भपात से जुड़ी कानूनी जानकारी

सुहास कुमार

बहुत बार अनचाहा गर्भ ठहर जाने पर गर्भपात करवाना पड़ता है। सही जानकारी न होने के कारण महिलाओं को स्वास्थ्य और जान का खतरा रहता है। माहवारी के दिन चढ़ने पर जल्दी से जल्दी जांच करवा लेनी चाहिए। जितनी देर की जाएगी उतना खतरा बढ़ता है। गर्भपात करवाने वाली महिला चाहे विवाहित हो या अविवाहित, इसको गोपनीय ही रखना चाहती है। राज़ खुलने के डर से वह सरकारी अस्पताल या मान्यताप्राप्त अस्पताल में जाने से कतराती हैं।

यह उनकी जानकारी की कमी है। इन अस्पतालों में कोई ग़ैर-ज़रूरी सवाल-जवाब नहीं किए जाते हैं। सरकारी अस्पतालों में आमतौर से यह सुविधा मुफ्त दी जाती है। गर्भपात एक छोटा-मोटा आपरेशन है और इसमें सफाई तथा कई सावधानियां बरतना ज़रूरी है। नहीं तो छूत और तरह-तरह की गड़बड़ी होने का डर रहता है।

इसे कई बार गर्भ-निरोध के तरीके की तरह अपनाया जाता है। लेकिन यह गलत है। बार-बार गर्भपात करवाने से शरीर कमज़ोर तो होता ही है, कई बीमारियां भी जड़ पकड़ लेती हैं। कभी-कभी गर्भधारण करने की शक्ति हमेशा के लिए खोई जा सकती है। कई मानसिक बीमारियां होने का डर भी रहता है। अगर बच्चा नहीं चाहिए तो निरोध या कॉपर टी इस्तेमाल करें। गर्भपात को गर्भ-निरोधक तरीके की तरह इस्तेमाल न करें।

अगर शादी के पहले किसी हादसे या नासमझी की वजह से किसी लड़की को बच्चा ठहर जाए तो इसे शर्म या डर से छिपाए नहीं। कम से कम अपनी मां, बड़ी बहन या भाभी आदि का सहयोग लें। यह एक बड़े संकट की घड़ी होती है। मां-बाप, भाई-बहन सभी को बड़ी समझदारी से काम लेना चाहिए। लड़की के शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य और भविष्य की चिंता करके सही रास्ता समझदारी से ढूंढना चाहिए। अगर गर्भपात करवाना ही हो तो जल्दी से जल्दी मान्यताप्राप्त अस्पताल में करवाएं।

गर्भपात के लिए डाक्टर कई तरीके अपनाते हैं। यह इस पर निर्भर करता है कि दिन चढ़े कितना समय बीता है। पहले कुछ दिनों में गर्भपात बहुत आसान है। गर्भाशय में एक ट्यूब डालकर उसकी सफाई कर दी जाती है। मरीज़ को कुछ ही समय में घर भेज दिया जाता है। दिन चढ़ने के दो हफ्तों के अंदर ही इसे इस्तेमाल किया जा सकता है। इसमें मरीज को बेहोशी की दवा देने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती।

अगले छह सप्ताहों में भी गर्भपात में

कुछ मिनट ही लगते हैं लेकिन इसमें बेहोशी की दवा दी जाती है। गर्भाशय को सुन्न करके दवा डाली जाती है। मरीज को अगले चार घंटे देखरेख के लिए अस्पताल में रखा जाता है। उसके बाद कुछ दिन दवाएं भी लेनी पड़ सकती हैं। एक हफ्ते बाद दोबारा जांच के लिए आना होता है।

बारह हफ्तों के बाद बहुत ज़रूरी होने पर ही गर्भपात किया जाता है। मोटे तौर से गर्भाशय में दवा डाली जाती है जिससे गर्भ बाहर आ जाता है। कभी-कभी चीरा लगाकर गर्भ को निकालना पड़ता है। **अनुभवहीन, नीम हकीम दाई के पास जाने से गंभीर समस्याएं हो सकती हैं जैसे बच्चेदानी का फट जाना, गर्भाशय नली को नुकसान पहुंचना, छूत लग जाना आदि।** बाद में और भी परेशानियां हो सकती हैं जैसे बार-बार गर्भ का गिरना, माहवारी की गड़बड़ी, बांझपन आदि। इससे मन में ग्लानि और पछतावे की वजह से मानसिक अस्वस्थता भी हो सकती है।

गर्भपात संबंधी कानून

अप्रैल 1972 से लागू गर्भपात कानून (एम.टी.पी. एक्ट) के तहत हर बालिग महिला गर्भ ठहरने के 12 हफ्तों में गर्भपात करा सकती है। लेकिन नीचे लिखे हालात में ही गर्भपात वैध माना जाएगा। यह हालात हैं—

1. गर्भवती महिला का जीवन खतरे में हो।
2. गर्भावस्था जारी रखने से गर्भवती का शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य बिगड़ रहा हो।
3. गर्भ बलात्कार से ठहरा हो।
4. बच्चे के विकलांग पैदा होने का डर हो।
5. गर्भ किसी गर्भ-निरोधक के काम न करने से ठहरा हो।
6. यह डर हो कि गर्भावस्था के जारी रहने से आगे चलकर स्त्री का स्वास्थ्य खराब होगा।

गर्भपात करवाने के लिए पति की मंजूरी ज़रूरी नहीं। अगर लड़की 18 साल से कम है तो अभिभावकों की मंजूरी लेनी पड़ती है।

अधिनियम में यह भी प्राविधान है कि ज़रूरी हो तो 20 हफ्ते तक भी गर्भपात करवाया जा सकता है। हांलांकि 12 हफ्ते से ज़्यादा की हालत में कम से कम दो डाक्टरों की सहमति ज़रूरी है।

गर्भपात कानून के नियम बहुत उदार हैं। गर्भ-निरोधक के काम न करने का आधार कोई भी गर्भवती महिला आसानी से ले सकती है। फिर भी जानकारी की कमी, शर्म आदि के कारण कई बार स्त्रियों को बहुत परेशानी उठानी पड़ती है।

गर्भपात कराने वाली बहनें एक बात गांठ बांध लें। नीम हकीम और अकुशल दाइयों से गर्भपात कभी न कराएं। गर्भपात के लिए मान्यताप्राप्त या सरकारी अस्पताल में ही जाएं।

□

यमराज से टक्कर लेने वा

सावित्री-सत्यवान की कहानी बहनों
लेकिन क्या कभी सावित्री के उन गुणों के
में सबला के गुण हैं।

- अपने जीवन के बारे में स्वयं फैस
  इरादा।
- अपने फैसले और चुने हुए रास्ते प
- आत्म-विश्वास और निडरता।

राजा की बेटी सावित्री ने गरीब
फैसला स्वयं लिया और उस पर अट
पक्का और दिल में थी हिम्मत। उसने जी
से सामना किया। आत्म-विश्वासी और
हार गए।

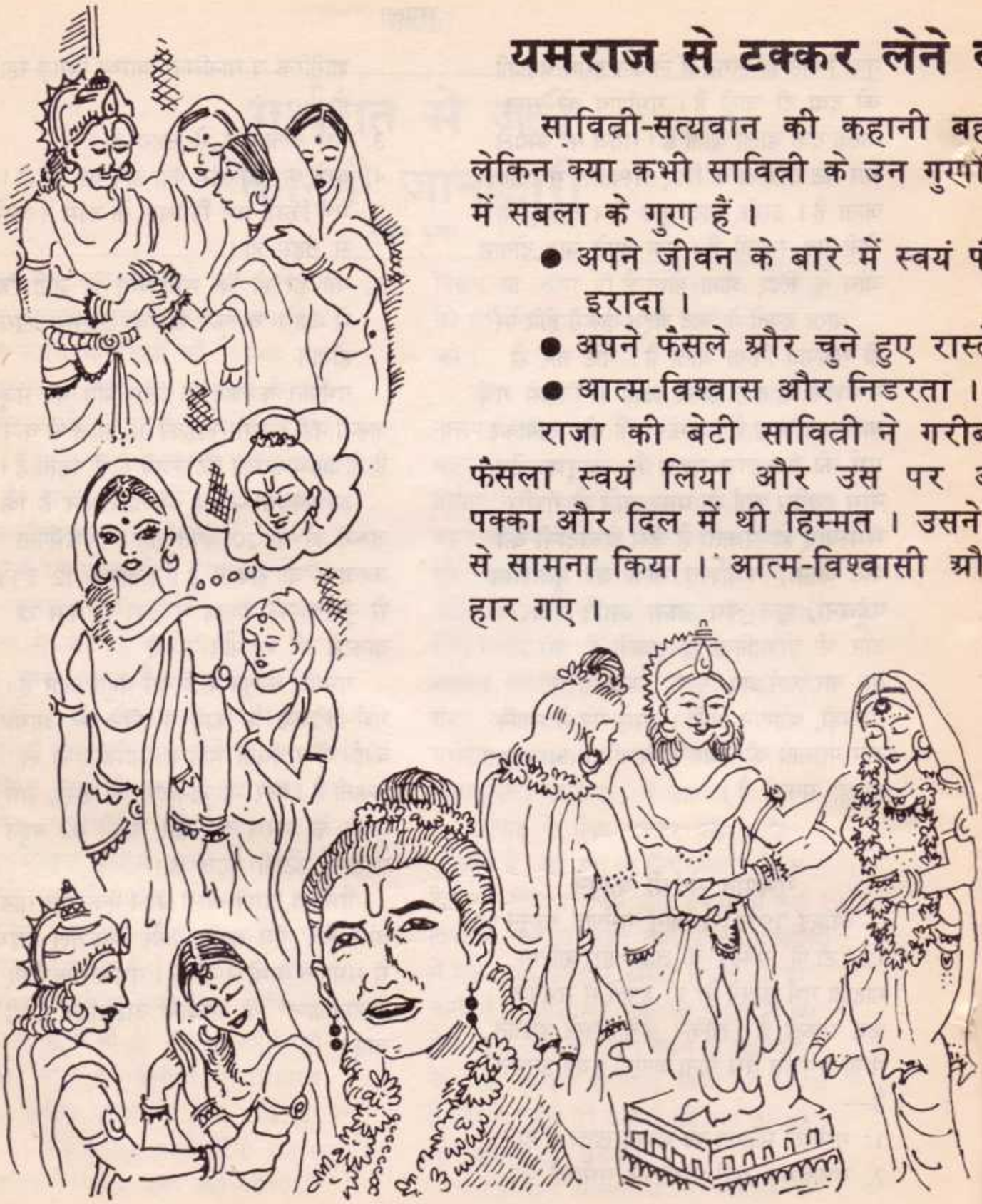

ाली सबला सावित्री

ों ने जरूर पढ़ी या सुनी होगी,
के बारे में सोचा जो सही मायने

ला लेने की ताकत और पक्का

पर चलने की हिम्मत ।

लकड़हारे से ब्याह करने का
टल रही । उसका इरादा था
जीवन की चुनौतियों का हिम्मत
निडर सावित्री से यमराज भी

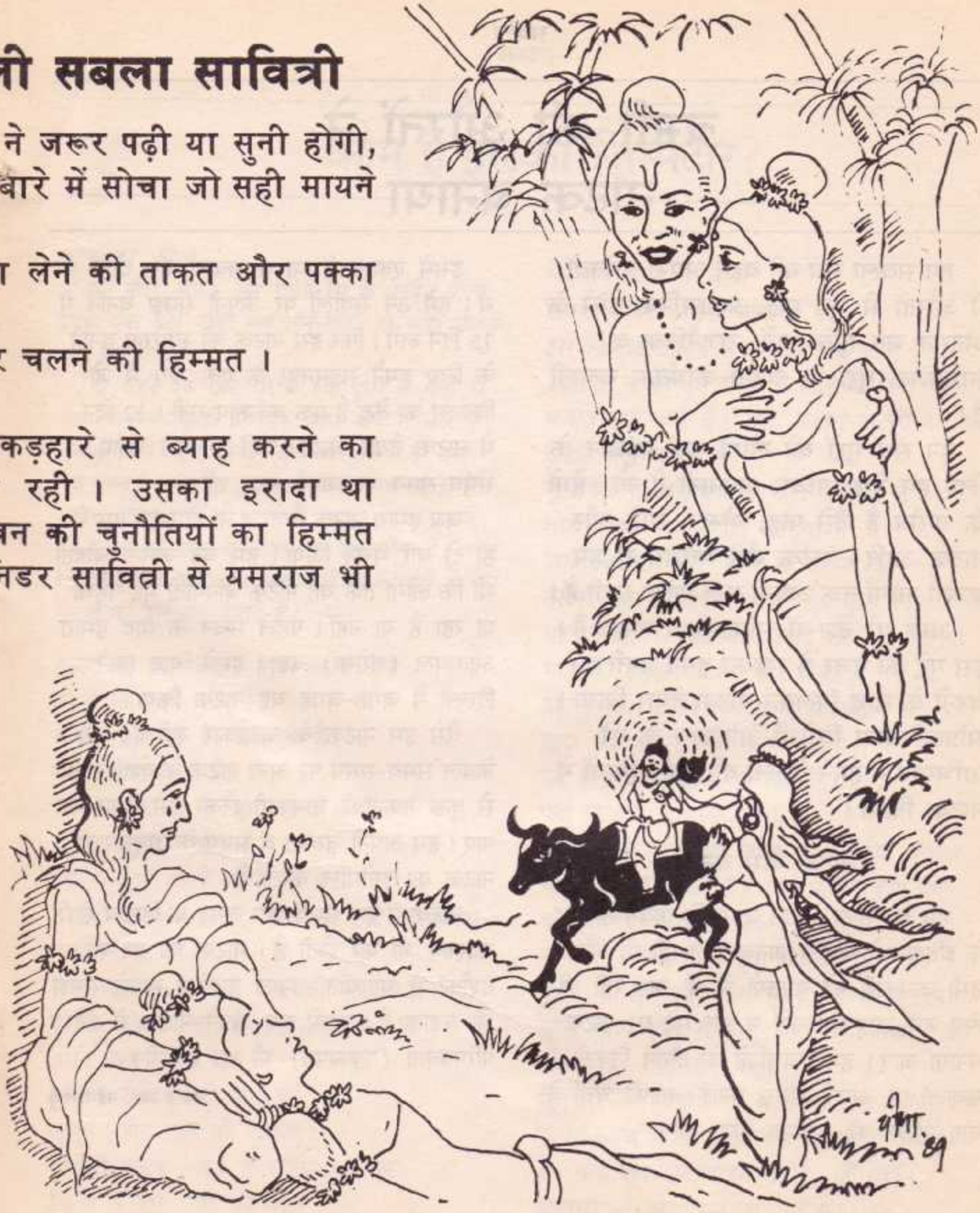

बस्ती की औरतों ने नाटक बनाया

हम सबला संघ की बहनें अपनी बस्तियों में औरतों से जुड़े मुद्दों, प्रशासनिक ढांचे के अंतर्गत जन सुविधाओं, राजनैतिक व सामाजिक मुद्दों पर चेतना कार्यक्रम चलाती हैं।

इन सब मुद्दों को लोगों तक पहुंचाने के लिए हम ऐसे माध्यम अपनाती हैं जो लोगों के करीब हैं जैसे फड़, पोस्टर, गाने और नाटक आदि। नाटक जैसे माध्यम से हम काफी लोगों तक अपनी बात पहुंचा पाती हैं।

आज पूरे देश में सांप्रदायिक तनाव है। इस मुद्दे को नजर में रखकर हमने बस्ती की बहनों के साथ मिलकर नाटक तैयार किया। सांप्रदायिकता विरोधी आंदोलन के पूरे अभियान में हमने दिल्ली की कई बस्तियों में नाटक किया।

नाटक कैसे बनाया

हम डेढ़ साल से राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद के इतिहास के बारे में जानकारी ले रही थीं और उसी जानकारी को बस्तियों में भी बांट रही थीं। फिर हमें लगा कि क्यों न इस मुद्दे पर नाटक बनाया जाए। हमने चर्चाओं के दौरान निकले सवालों पर अपनी समझ बनाई। काफी चर्चा के बाद नाटक की रूपरेखा तैयार की।

इसमें एक्शन इंडिया व सबला संघ दोनों ही थे। हमें उन सवालों पर अपनी समझ बनाने में 15 दिन लगे। फिर इस नाटक की रूपरेखा बनाने के लिए हमने सहारनपुर के एक गांव में जो विकल्प का केंद्र है एक वर्कशाप रखी। 12 दिन में नाटक तैयार किया। वहीं पर गाने बनाए। समय-समय पर बाहरी मदद ली।

जब हमारा नाटक तैयार हुआ तो सहारनपुर में ही दो बार मंचन किया। हम यह जानना चाहती थीं कि लोगों तक यह नाटक बुनियादी मुद्दे पहुंचा पा रहा है या नहीं। पहले मंचन के बाद हमारा आत्मबल (भरोसा) बढ़ा। इसके बाद हमने दिल्ली में जगह-जगह यह नाटक किया।

वैसे हम नाटक के कलाकार नहीं हैं। हम केवल समय-समय पर अन्य नाटक कार्यशालाओं से कुछ तकनीकी जानकारी लेकर इसे तैयार कर पाए। हम अपनी ज़रूरत व समय के अनुसार ही नाटक का इस्तेमाल करती हैं।

नाटक में हम समय और जगह के हिसाब से बदलाव भी कर लेती हैं। नाटक का हर शो, दर्शकों से बातचीत, उनका नज़रिया हमारी समझ भी बढ़ाता है। इससे हम अपने नाटक में और परिपक्वता (पक्कापन) भी ला सकेंगी।

सबला संघ, नई दिल्ली

कौन है इसका ज़िम्मेदार?

नाटक का सामान

हरे, नीले, सफेद और संतरी रंग के दुपट्टे। पीला दुपट्टा एक और बाकी सब तीन-तीन। दो जोड़ी ढपली और करताल।

12 बहनें एक छोटे घेरे में एक दूसरे के कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी हैं। एक बहन बीच में बैठी है। तीन बहनों ने संतरी, तीन ने नीले और तीन ने हरे तथा एक बहन ने सफेद दुपट्टा पहन रखा है। यह सारे दुपट्टे अलग-अलग धर्मों को दर्शाने के लिए प्रयोग किए गए हैं, ढपली की ताल के साथ घेरा बड़ा होता है। बाहर की बहनें बैठ जाती हैं। अंदरवाली बहनें खड़ी हो कर नाटक की शुरुआत करती हैं।

अंदर घेरे वाली गाना शुरू करती हैं।

झांसी की रानी कौन है?

सब—हमीं तो हैं, हमीं तो हैं।

मदर टेरेसा कौन है?

सब—हमीं तो हैं, हमीं तो हैं।

रज़िया सुल्तान कौन है?

सब—हमीं तो हैं, हमीं तो हैं।

तीसरी बहन—हम हैं झांसी की रानी जिसने हार कभी न मानी।

एक बहन—मैं बढ़ी देश की शान बढ़ाने।

दूसरी बहन—हम हैं भगतसिंह की मां
हमने ऐसा लाल जना
अंग्रेजों से आज़ादी पाने को
हुआ शहीद देश की खातिर।

तीसरी बहन—हम हैं रज़िया सुल्तान
मिटने न देंगी नारी की आन
भेदभाव हमने न जाना
सबको हमने अपना जाना।

इस आख़िरी लाइन के साथ ही चार बहनें दुपट्टा ओढ़कर नाचते हुए दो-दो के जोड़े के साथ ताली बजाते हुए गाती हैं। जोड़े अलग-अलग रंग के दुपट्टे वाले बनाते हैं।

गाना-काला डोरिया कुंडे नाल अड़िया है
छोटा देवरा भाभी नाल लड़िया है

जगह बदलते हुए, बीच में नजमा को उसकी सहेली मेहंदी लगाती है। कुछ लोग चूड़ी पहनाते और घर का काम आदि करते हैं। सलमा भाई का इंतज़ार करती है। गानाः

अल्ला की कसम मैंने खाना पकाया
खुदा की कसम तुम्हें खाना पड़ेगा
पर्दे ही पर्दे में कब तक रहोगी
पर्दा उठाकर दिखाना पड़ेगा।

इस गाने के तुरंत बाद नज़मा को सखियां उठाकर बीच घेरे में ले जाती हैं। बन्नी गाती नज़मा भाई का इंतजार करती है—

बन्नी तेरे हाथों की मेहंदी मज़ेदार है
फूलों का ही गजरा तेरा फूलों का ही हार है

बन्नी ख़त्म होते ही और बहनें इधर-उधर खड़ी होकर धीरे-धीरे बातें करती हैं।

सूत्रधार— सदियों से चली आ रही हमारी यह परंपरा आज भी है, कुछ लोग इसे तोड़ना चाहते हैं। क्या तुम इसे तोड़ने दोगे? नहीं-नहीं।

सलमा— आदाब रमेश भाईजान।

रमेश— कहो सलमा बहन, कैसी हो?

सलमा— भाईजान, मैं तो घबरा ही गई थी। पता नहीं आप निकाह के समय पहुंचेंगे या नहीं।

रमेश— सलमा बहन आज रामनवमी थी, उसकी पूजा करके आया हूं।

सलमा— शुक्र है अल्ला का आप समय पर पहुंच गए।

रमेश— तुम्हारे यहां रीति रिवाज़ क्या हैं?

सलमा— भाईजान, आप आ गए, मेरे लिए यही काफ़ी है।

गाना— "मेरा छोटा सा भैया भात ले के आया
चलो देख आएं चलो देख आएं
साड़ी भी लाया, जम्पर भी लाया
शालों की जोड़ी हवा में उड़ी जाए
चलो देख आएं—

गीत गाते गाते सभी एक बड़े घेरे में बैठ जाते हैं। फिर बातचीत रोज़मर्रा की समस्याओं पर चलती है।

एक बहन— आज पंद्रह दिन बाद राशन आया है। अरी सलमा ज़ल्दी आ जा।

दूसरी बहन— राशन की दुकान पर राशन मिलता नहीं है। गेहूं बाहर से 5 रुपये किलो मिलता है। बच्चों का पेट कहां से भरा जाए।

—कई दिन से पानी नहीं आया। आया भी तो रात के 2 बजे आया। दिन में काम करें रात में सोएं या पानी भरें।

—दो घंटे से लाइन लगाएं हैं। दवाई ढंग से देते नहीं हैं।

—कोई भी तकलीफ़ हो एक जैसी दवाई देते हैं, चाहे खांसी हो या दस्त।

—क्या खाक़ दवाई लेने जाएं। पहले पूछते हैं कितने बच्चे हैं। नसबंदी कराई है या नहीं।

मिट्टी के तेल की बोतल 7 रुपये की हो गई है। राशन में मिलता नहीं है। मिलता है तो पूरा नहीं पड़ता है।

ऊपर लिखे संवाद कोई भी बहनें बोल सकती हैं। इनमें और जोड़े भी जा सकते हैं। एक बहन दौड़कर आती है—"दंगे हो गए।" दो और लोग दोहराते हैं दंगे हो गए, तुमने सुना दंगा हमारी गली तक आ पहुंचा है। सभी लोग घेरा तोड़कर दंगा दंगा कहते हुए डरते हैं, घबराते हैं। इतने में रेडियो द्वारा समाचार प्रसारित होता है। सभी समाचार सुनते हैं।"

दूसरी बहन—*हाथ में ट्रांजिस्टर को सुनते हुए जैसी भंगिमा दिखाती है। खुद बोलती है। "अभी आपके सामने आकाशवाणी से हिन्दी में समाचार पेश है। दो समुदायों के बीच में दंगा होने के कारण 10 लोगों की जानें गईं। 50 लोग घायल हुए। घायलों को अस्पताल में दाख़िल करा दिया गया है। प्रधानमंत्री ने सभी घायलों के प्रति शोक व्यक्त किया है। मृतकों को 10 हज़ार और घायलों को 1 हज़ार रु. दिया जाएगा। सेना बुला ली गई है। स्थिति शांत है लेकिन दंगे अन्य इलाकों में भी फैले हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—अहमदाबाद, कोटा, जयपुर, अलीगढ़ और आगरा आदि। अभी-अभी भागलपुर में दो संप्रदायों के बीच झगड़े होने के कारण दो इलाकों में आग लगा दी गई है। इसके साथ ही समाचार समाप्त हुआ।" समाचार समाप्त होते ही सब की घबराहट और बढ़ जाती है। सभी धर्मों के लोग अपने-अपने गुटों में बंट जाते हैं, और सभी अपने-अपने पक्ष की बातें कहते हैं। बीच में एक व्यक्ति सभी की बातें आश्चर्य से सुनता है।*

संतरी दुपट्टा— बेटा, ज़रा मैं सुरेंद्र के घर हो आऊं।

बेटा—नहीं मां, अब तुम वहां नहीं जाओगी।

मां—मगर क्यों?

बेटा—क्योंकि अब वे हमारे दुश्मन हैं।

मां—कल तक तो हम एक दूसरे के घर आते जाते थे। आज वे हमारे दुश्मन कैसे हो गए?

हरा दुपट्टा (मुस्लिम)—मां, मैं लक्ष्मी के घर जा रही हूं।

मां—बाहर दंगे हो रहे हैं, कहीं नहीं जाना। (बेटी घबराहट दिखाती है) मां, मैं लक्ष्मी को दंगों का बताकर आ रही हूं।

मां—कह दिया न, अब वहां नहीं जाना है।

नीला दुपट्टा ओढ़े बहन—बेटी, मैं नज़मा के घर जा रही हूं।

बेटी—नहीं, तुम अब वहां नहीं जाओगी।

बाप—रोको इसे अब।

हिंदू—तुमने सुना हमारे मंदिर में गाय का मीट डाल दिया है।

सब—राम-राम-राम...।

हिंदू—दंगा इतना बढ़ा कि वहां लाठी चार्ज भी हुआ है।

सब—हे राम...।

मुस्लिम—देखा, हमारी मस्जिद में जानवर का गोश्त डाल दिया है।

सभी—तौबा-तौबा...।

बहन—पुलिस ने गोली चलाई और आंसू-गैस भी छोड़ी है।

सब—या अल्लाह...।

सिक्ख—पता है पंजाब से लाशों से भरी गाड़ियां आई हैं और वहां बम भी छोड़े गए हैं, कर्फ्यू भी लगा दिया है।

सब—वाहे गुरू, वाहे गुरू...।

बीच वाला व्यक्ति—अरे, मैं तो कल ही पंजाब से आया हूं, मैंने तो कोई लाशों से भरी गाड़ी नहीं देखी। क्या तुमने देखी है? (तीनों गुटों से पूछता है, तीनों गुट कुछ नहीं कहते। लोगों की तरफ सवाली मुद्रा में मुख कर लेते हैं।)

बीच वाला व्यक्ति—किसी ने नहीं देखा, सिर्फ सुनी-सुनाई बातों पर विश्वास कर लिया। ये सब तो अफ़वाहें हैं।

सभी लोग भावपूर्ण ढंग से हवा में हाथ हिलाकर अफवाह, अफवाह कहते हैं। एक जना—लाठी, दूसरा गोली, तीसरा कर्फ्यू, चौथा डर, पांचवा शक, छठा ज़ोर से नफ़रत कहते-कहते एक बड़े घेरे में खड़े हो जाते हैं। फिर बैठ जाते हैं।

हिंदू—बच्चा-बच्चा राम का, जन्मभूमि के काम का।

मुस्लिम—इस्लाम ख़तरे में है, खुदा के बंदो चंदा दो।

सिक्ख—हमें चाहिए अपनी पहचान, बनाकर रहेंगे ख़ालिस्तान।

सभी धर्म—मारेंगे मर जाएगें, मंदिर वहीं बनाएंगें, इस्लाम ख़तरे में है, बनाकर रहेंगे ख़ालिस्तान।

इस तरह, एक दूसरे को मारने को तैयार गुस्सा, नफ़रत से आगे बढ़ते हुए, इतने में एक शांतिप्रिय व्यक्ति आकर उन्हें रोकता हैं और कहता है—

क्या तुम बता सकते हो कि ये जो खून बहेगा किस धर्म का होगा? क्या गीता में, कुरान में या गुरूग्रंथ साहब में कहीं लिखा है कि खून बहाओ। उसने तो हम सबको एक रंग की डोर में बांधा है। फिर ये धर्म के नाम पर झगड़े क्यों? राम के नाम पर दंगे क्यों? रहीम के नाम पर दंगे क्यों?

(सभी लोग गाने के लिए घेरे में आ जाते हैं। घेरे में चार लोग खड़े होते हैं बाकी लोग उनके चारों ओर घुटनों के बल बैठकर गाना गाते हैं। लोग पास-पास हैं, सबके मुख दर्शकों की ओर हैं।)

गाना—देख तेरे भक्तों की हालत क्या हो गई
राम रहीम,
कितने बदल गए तेरे भक्त...
भक्त जो करते थे भक्ति
आज बने वह छली और कपटी
कहीं पे लांठी, कहीं पे गोली
खेल रहे क्यों खून की होली
सब कुछ देख रहा है फिर भी
बना है क्यों अनजान।
कितना बदल गया इंसान
जात-पात के नाम पे देखो
दिलों में क्यों दरार पड़ी है
अपनी ये कुर्सी की ख़ातिर
देश को क्यों बर्बाद ये करते
कोई भूखा, कोई नंगा
क्या सच है देश महान
कितना बदल गया इंसान।

एक बहन—देश तो महान तब होगा जब हर इंसान की भूख मिटेगी।

(बाकी लोग घेरा बनाते हुए बोलते हैं)

यह देश तो महान तब होगा जब सब बेरोज़गारों को रोजगार मिलेगा। बुनियादी हक सिर्फ कागज पर ही नहीं रहेंगे।

सभी लोग—भाईचारा हो बहनचारा हो
राम भी वही रहीम भी वही
क्यों कर रहे हो अनादर
मंदिर भी रहे मस्जिद भी रहे
एक दूसरे में जाते भी रहें
आते भी रहें
आओ मिल कर हम वायदा करें
तोड़ें नहीं फोड़ें नहीं
जो जहां है वहीं रहे। ◻

पिछले दस सालों में औरतों के संगठनों की गिनती में बहुत ज़्यादा बढ़ोतरी हुई है। अब दूर-दराज़ के इलाकों में भी लोग काम करते दिखलाई पड़ते हैं। फिर भी अभी और बहुत से संगठनों की ज़रूरत है। कई बार लोग जानना चाहते हैं कि महिला संगठन का काम कैसे शुरू करें? औरतों को किन मुद्दों पर संगठित करें?

पहली बात

सबसे पहले तो हमें यह समझना चाहिए कि विकास का मतलब चौतरफ़ा बेहतरी है। इसलिए औरतों के जीवन के सभी पहलुओं की तरफ बराबर ध्यान देना ज़रूरी है। चाहे वह स्वास्थ्य हो या शिक्षा। खेती-बाड़ी हो या हक़ों का सवाल।

संगठन का मुख्य मुद्दा चाहे कोई भी हो, उसे बाकी की ओर भी ध्यान देना होगा। जैसे अच्छी फ़सल के लिए सिर्फ अच्छा बीज़ ही काफ़ी नहीं है। अच्छी मिट्टी, खाद, पानी, धूप, निराई-गुड़ाई सभी चाहिए। वैसे ही औरतों की जिंदगी बेहतर बनाने के लिए भी उसके हर पहलू में सुधार लाना होगा।

दूसरी बात

दूसरी मुख्य बात यह है कि किस जगह, किन मुद्दों को उठा कर औरतों को संगठित किया जाए। यह उस जगह के हालात तय करते हैं। जब औरतों के साथ मिल बैठ कर चर्चा होती है। उनकी जिंदगी के बारे में जानकारी हासिल की जाती है तो मुख्य मुद्दे खुद सामने आ जाते हैं। जैसे, देहाती इलाकों में चारे-ईंधन की तकलीफ, पीने के पानी की कमी, पुरुषों में शराबखोरी, औरतों के साथ मारपीट वगैरह।

क़स्बों और शहरों में कुछ दूसरे किस्म की परेशानियां हो सकती हैं। जैसे बेरोजगारी, रहने की जगह की कमी, दहेज, औरतों के साथ हिंसा और अपराध। बहुत से मुद्दे शहरों, कस्बों और गांवों में एक जैसे ही होते हैं। इनमें से जो मुद्दे उस जगह ज़्यादा महत्वपूर्ण हैं उन्हें पहली सीढ़ी बना कर आगे बढ़ना चाहिए।

एक उदाहरण

किस तरह से हालात मुद्दों को पैदा करते हैं, मुद्दे संगठन को जन्म देते हैं। इसका एक उदाहरण है दिल्ली की संस्था शक्तिशालिनी।

कुछ साल पहले दो औरतें एक जैसे हादसों से गुजरीं। वह हादसा था उनकी शादी-शुदा बेटियों को दहेज के लिए जला दिया जाना। अलग-अलग धर्म और वर्ग की इन दोनों औरतों का दर्द एक था। इस तरह से सन् 1986 में दहेज के मुद्दे पर सोचने वाली बहुत सी औरतें एक दूसरे से जुड़ीं। सन् 1987 में एक संस्था बनी शक्तिशालिनी।

काम का दायरा

इस संस्था की शुरुआत दहेज की समस्या को लेकर हुई थी। अब यहां हर तरह की मुसीबत में पड़ी लड़कियों, औरतों की मदद की जाती है। इस संस्था का एक आश्रय घर है। यहां घर से

निकाली या जान बचा कर भागी हुई बेसहारा औरतों को रहने की जगह मिलती है।

औरतों के मां-बाप या ससुराल वालों के अत्याचारों से निपटने के लिए यहां की कार्यकर्ता उनसे मिलती हैं। ज़रूरत होने पर अदालत में मुकदमा ले जाती हैं। वकीलों से सहायता दिलवाती हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि यह संस्था इन औरतों को अपने आप में भरोसा पैदा करवाती है। उन्हें अपने पैरों पर खड़ा होने में मदद करती है। जिंदगी की लड़ाई लड़ने की हिम्मत दिलाती है।

यह संस्था औरतों को उनके कानूनी हक़ों की जानकारी भी देती हैं। आजकल यहां छः कार्यकर्ता पूरे समय काम करती हैं। चार कार्यकर्ता दफ्तर संभालती हैं। दो कार्यकर्ता बारी-बारी से रात-दिन आश्रय घर की देखभाल करती हैं।

एक दूसरे की मदद

ज़रूरत पड़ने पर ये लोग पुलिस की मदद भी लेती हैं। पुलिस भी बेसहारा औरतों को इनके पास भेजती है। शक्तिशालिनी दिल्ली की दूसरी महिला संस्थाओं को पूरा सहयोग देती है। दिल्ली के बाहर दूसरे शहरों की समाज सेवी संस्थाओं से भी इनका जुड़ाव है। इनके बारे में यही कहा जा सकता है कि जैसा नाम वैसा काम।

संस्था का पता—
शक्तिशालिनी,
48, बाज़ार लेन, भोगल
नई दिल्ली

सबला

अबला तेरी यही कहानी
नफरत तूने खूब सही
ढोर डंगर से रगड़ी गई
फिर भी मुंह से कुछ न कही
इस क़दर तू पिसती गई

एक दिन तू ब्याही गई
गड्ढे से निकाली गिरी खाई में
जहां दहेज के मुंह से खाई
अबला नारी फिर जलाई गई
बच गई तो भी मुसीबत आई

अब उसने लड़की जन्मी
फिर से यही कहानी
किंतु अबला तेरी क्यों है यह कहानी?

प्रगति पाटिल
कक्षा 9वीं, आयु 13 वर्ष, देवास (म.प्र.)

मैं हूं कल की माता
क्यों मेरे प्राणों पर बन आते?
विज्ञान से गर्भपात करवाते
जन्म से पहले ही मुझे मरवाते

लड़की हूं मैं छोटी
काम लेते मुझसे मोटे मोटे
कहां गई आपकी ममता
की पशुओं में गणना, मारा मुझे बेआवाज़

लड़के को समझते घर का दीप
लड़की को समझते अभिशाप
बालिका का क्या कोई नहीं दाता?
बदलूंगी मैं अपना भाग्य

कमजोर मुझे मत समझना
अभी जागृत हो गई ललना।

सुमन कोलंगटिवार
चंद्रपुर (महाराष्ट्र)

सांप्रदायिक दंगों का महिलाओं पर असर

(सुश्री अन्नु, समता ग्राम सेवा संस्थान, पूर्वी लोहानीपुर की रपट के कुछ अंश)

बिहार में पिछले वर्ष हुए सांप्रदायिक दंगों से सारा जन-जीवन अव्यवस्थित हो गया। भागलपुर शहर से सुलगी आग 200 से भी अधिक गांवों में फैल गई, बस्तियां की बस्तियां कब्रगाह में बदल गईं। भागलपुर दंगों के फैलाने में दो अफवाहों का ख़ास हाथ रहा। एक, भागलपुर विश्वविद्यालय परिसर में लड़कों की सामूहिक हत्या। दो, सुंदरवती महिला कालेज के छात्रावास में लड़कियों के साथ बलात्कार एवं हत्या की खबरें। लोहरदगा में गाय को काटकर उसका ताज़ा खून दो हिन्दू लड़कियों पर फेंका गया—इस अफवाह से दंगे की आग भड़की।

अकसर एक संप्रदाय के लोग बदला लेने की आड़ में दूसरे संप्रदाय की स्त्रियों व बच्चों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं। इसका बदला भी बहुत घृणित ढंग से लिया जाता है। दंगों के दौरान महिलाओं के साथ बलात्कार कर उनकी हत्या कर दी गई। एक संप्रदाय द्वारा विरोधी संप्रदाय के खिलाफ़ दीवारों पर भद्दे नारे लिखने की परिपाटी भी शुरू हो गई है।

आतंक का माहौल

दंगा शुरू होने के पहले से ही औरतों को एक अनिश्चय और आतंक के माहौल से गुज़रना पड़ता है। कई बार उन्हें 'सुरक्षित स्थान' पर पहुंचा दिया जाता है। अपना घर छोड़ने का दुख और परेशानी उन्हें ही झेलनी पड़ती है। घर की पूरी जिम्मेदारियां पहले जैसी ही रहती हैं। कई बार लगता है कि वे औरतों की इज्ज़त बचाने के लिए नहीं बल्कि औरतों पर अपने शोषण के अधिकार के लिए लड़ रहे हैं।

एक बार दंगा भड़क जाने पर पूरा इलाका काफ़ी लंबे अरसे के लिए अशांत हो जाता है। दंगे की चपेट में आए बिहार के उन तमाम इलाकों की महिलाएं आज भी डरी सहमी हैं। दंगों के दौरान गर्भ में पल रहे बच्चे से लेकर 102 साल की हसीना तक की हत्या की गई। वैश्याओं तक को नहीं बक्शा गया। बलात्कार का सिलसिला दंगों के बाद भी कायम रहा। अपने धर्म व संप्रदाय के लोग भी औरतों की मजबूरी का फायदा उठाने से नहीं चूकते। पुलिस की छापा-मारी अलग चलती रहती है। पुरुष सदस्यों को जेल में डाल देते हैं। कई बार सुरक्षा के बहाने पुरुषों को पकड़ ले जाते हैं। फिर औरतों के साथ यौन हिंसा की खुली छूट मिल जाती है।

कर्फ्यू जल्दी ही लोगों को दाने-दाने को मोहताज कर देता है। बेबसी के इस दौर की सज़ा औरतों को ज़्यादा झेलनी पड़ती है। बच्चे उन्हीं से खाना मांगते हैं। कर्फ्यू के दौरान बहुत सी औरतें रो-रोकर अपने बच्चों के लिए दूध मुहय्या कराने की प्रार्थना करती मिलीं।

दंगों के बाद

दंगों के बाद की चपेट में आई बहनें अस्पतालों या राहत शिविरों में जाती हैं। औरतें जली हुई या घायल अवस्था में महीनों अस्पताल में गुज़ारती

हैं। राहत शिविरों में जीवन नारकीय ही है।

बेवा और अनाथ महिलाओं की कहानी भी कम दर्दनाक नहीं है। पति के मरने से विधवाएं, बेटों के मरने से बेवा मांएं, भाइयों के मरने से कुंआरी बहने अनाथ सी हो जाती हैं। सरकार मोटे मुआवजे की घोषणा करती है, लेकिन उसे पाना इन लुटी हुई स्त्रियों के लिए लगभग असंभव सा होता है। मुआवज़ा पाने के लिए थाने में मौत की प्रथम सूचना रपट और मृतक की पोस्टमार्टम रपट ज़रूरी है। दंगों के दौरान कौन महिला पुलिस थाने जाने की हिम्मत करेगी? डर और आतंक के माहौल में परेशानियों से घिरी कौन महिला पति के शव का पोस्टमार्टम करवाएगी?

अगर किसी प्रभावशाली व्यक्ति के बीच-बचाव से मुआवज़ा मिलना तय भी हो जाए तो रकम मिलना बहुत मुश्किल होता है। बिहार सरकार ने एक लाख रु. मुआवजा देने की घोषणा की थी। जिन्हें मिला भी है उन्हें केवल 40,000 रु., बाकी सरकारी और गैर-सरकारी बिचवइयों के हिस्से में गया। सैंकड़ों लोगों की जाने गई। मुआवजा अभी सिर्फ 9-10 लोगों को मिल पाया है। फर्ज़ी मुआवजों की पर्चियां भी तैयार कर ली जाती हैं। लोगों की हिफाजत के नाम पर दोनों संप्रदाय के लोग हथियार खरीदने के लिए अलग पैसे ऐंठते हैं। लापता को मरा हुआ साबित नहीं किया जा सकता।

सांप्रदायिकता के विरोध में धरना देने वाली महिलाओं पर पटना के गांधी मैदान में और गांधी सेतु पर पुलिस ने बर्बरता से लाठी-चार्ज किया। कई महिलाओं को गिरफ्तार किया।

सांप्रदायिकता का जहर मिटाने के लिए एक सामूहिक व संगठित प्रयास की ज़रूरत है। □

नर्मदा योजना के बारे में कुछ तथ्य

हमारे देश में विकास के नाम पर बड़ी-बड़ी योजनाएं बनाई जाती हैं। इसी तरह की एक योजना है "नर्मदा घाटी विकास परियोजना"। सरकार और बड़ी-बड़ी कंपनियां इसको सन् '84 से कारगर करना चाह रही हैं। भारत की बड़ी नदियों में से एक नर्मदा नदी देश के बीचों-बीच भाग से हो कर बहती है। यह मध्य प्रदेश और गुजरात राज्यों से गुज़रती है। योजना के तहत 30 बड़े, 135 मझोले और 3000 छोटे बांधों को बनाने का विचार है। इन बांधों से बिजली बनाने और सिंचाई का काम होगा। कोई पक्का सरकारी आंकड़ा नहीं मिलता है, लेकिन अंदाज है कि इसको पूरा करने में 30 से 40 हज़ार करोड़ रुपया खर्च होगा। करीब 10 लाख लोग उजड़ जाएंगें।

इसकी दो बड़ी योजनाएं हैं। सरदार सरोवर—गुजरात के भरूच जिले में और नर्मदा सागर परियोजना—मध्य प्रदेश के खंडवा जिले में।

इससे मध्य प्रदेश को बहुत नुकसान होगा। सिंचाई के लिए उन्हें पहले बांध से पानी नाम के वास्ते मिलेगा। दूसरे से जिस ज़मीन की सिंचाई के लिए पानी मिलेगा उसकी 40 फ़ी सदी ज़मीन दलदल में बदल जाएगी, जिसे किसी भी तरह रोका नहीं जा सकेगा। उजड़े हुए लोगों में 60 फ़ी सदी आदिवासी होंगें। उन्हें जीवन यापन के लिए खेती बाड़ी के सिवा कोई हुनर नहीं आता। इनके लिए न तो रहने को घर बचेगा, न रोटी के लिए रोज़ी। □

लड़ाई एक लड़की की

सुहास कुमार

तीस वर्षीय महिला मेधा पाटेकर ने आदिवासियों को जोड़कर सरकार के खिलाफ लड़ाई में जान की बाजी लगा दी है। उसकी लड़ाई 1985 से शुरू हुई थी। कुछ आदिवासियों के आधे-अधूरे संगठनों के प्रतिनिधियों को साथ लेकर वह महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के सरकारी अफसरों से मिलीं। सरकारी अफसर उन्हीं से गांवों के आंकड़े मांगते। इन लोगों ने काफी मेहनत करके आंकड़े जमा किए। नतीजा क्या हुआ? इनकी जानकारी बढ़ती गई, सरकार वहीं की वहीं रही।

शुरू में 200 समितियों ने इनके सत्याग्रह आंदोलन में साथ दिया। मेधा किसी राजनैतिक दल की सदस्या नहीं हैं। उन्होंने जनशक्ति को संचालित करके एक नई आशा का संचार करने वाला एक बड़ा आन्दोलन खड़ा कर दिया है। मेधा की सबसे बड़ी जीत यह है कि किसान और आदिवासी मिलकर इस लड़ाई में शामिल हुए हैं। इसमें दलित वर्ग के लोग भी शामिल हैं।

शुरू से ही पूरा आंदोलन शांतिपूर्ण, गांधीवादी तरीकों से चलाया जा रहा है। मेधा ने उस क्षेत्र के 7 प्रतिनिधियों के साथ 7 जनवरी से 28 जनवरी '91 तक भूख हड़ताल की। इससे सरकार पर कोई खास असर नहीं हुआ। लेकिन आंदोलनकारियों की ताक़त बढ़ी है। मेधा के शब्दों में "21 दिनों के उपवास के बाद हम 21 गुना ज़्यादा ताक़त लेकर, संघर्ष के लिए तैयार होकर जा रहे हैं।"

30 जनवरी '91 की संकल्प सभा में कहा गया कि "राष्ट्रपिता गांधी की पुण्यतिथि पर गुजरात सरकार ने सभी गांधीवादी मूल्यों की हत्या की है। इसलिए अब हम सरकार के पास किसी मांग को लेकर नहीं जाएंगें। संविधान ने हमें जीने का अधिकार दिया है। हम अपने गांव में अपना राज कायम करेंगें। शिक्षक और डाक्टर के सिवा किसी सरकारी कर्मचारी को गांव में नहीं घुसने देंगे।"

आदिवासियों का कहना है, "हम इंसान हैं, आंकड़े नहीं।" संगठन बढ़ रहा है। आंदोलनकारियों ने घोषणा की है, "जंगल, ज़मीन और पानी पर सरकार का कोई अधिकार नहीं है। इसलिए उससे जुड़ा कोई कानून हम नहीं मानेंगे।" उन्होंने सोच लिया है और बाबा आमटे ने कहा भी है, "हमारी तैयारी नर्मदा में डूब जाने की है। कोई नहीं हटेगा। बांध नहीं बनेगा।"

इस लड़ाई में जनता का पूरा एका और भरपूर सहयोग की ज़रूरत है। इस लड़ाई में जनता की मन, वचन, कर्म से एकता पूरे देश की जनता के भविष्य के निर्माण की दिशा तय करेगी। क्या सरकार की गलत बातें हम मुंह, आंखें बंद कर मान लें? या संगठित होकर उसके खिलाफ आवाज उठाएं? □

ताती ताती तोता

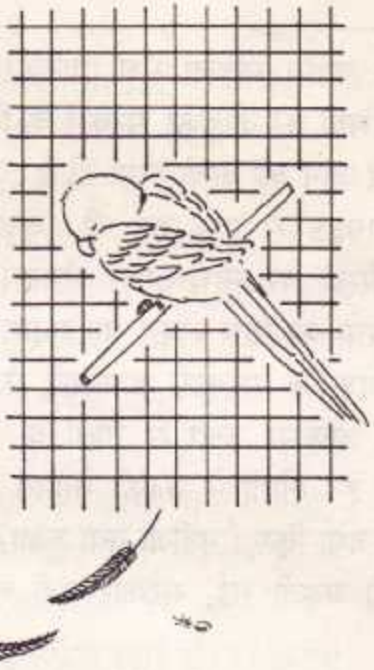

ताती ताती तोता
पिंजरे में सोता
पंख जो हरे थे
उड़न से भरे थे
हो गये हैं पीले
पड़ गये हैं ढीले
ताती ताती तोता
पिंजरे में सोता

उड़ते उड़ते सारी रात
आके मिलजा अपने साथ
छोटे भाई तोता प्यारा
तू भी बन जा एक सितारा

ताती ताती तोता
पिंजरे में सोता
झांकते हैं प्यारे
नन्हे नन्हे तारे
कहते हैं तोता
काहे को तू रोता
अंधकार छोड़ दे
पिंजरे को तोड़ दे

हेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय

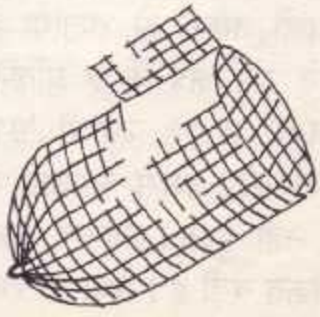

जोत शिक्षा की जगाए जाएंगे

प्रौढ़ शिक्षा में मन को लगाए जाएंगे
जोत भारत में इसकी जगाए जाएंगे

समझ रहे थे बूढ़े कैसे पढ़ेंगे
पढ़-पढ़ के आगे यह कैसे बढ़ेंगे

भूख शिक्षा की मिल के हम पूरी करेंगे
काम भारत का यह हम ज़रूर करेंगे
ऐसी बिगड़ी दशा को बनाए जाएंगे

बेपढ़े हैं यह कहने न देंगे हम
बेपढ़े लोग रहने न देंगे हम
सिर नीचे से ऊपर उठाए जाएंगे
जोत भारत में शिक्षा की जगाए जाएंगे

शब्द : ऋषि मोहन-श्रीवास्तव
चित्रांकन : तापोशी घोषाल

प्रेरकों ने लिखा है

'सबला' पत्रिका हमारे जन शिक्षण निलियम की खास चर्चित पत्रिका बन चुकी है। इसकी लोकप्रियता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। विशेषकर महिलाएं काफी उत्सुकता से पत्रिका को पढ़ती हैं। पत्रिका के लेखों से उनका मार्गदर्शन हो रहा है।

बुंदाशाह
गजरौला कलां, पीलीभीत (उ.प्र.)

'सबला' में प्रकाशित गीत ''दीप जलाएं'' बहुत अच्छा लगा। इस गीत में साक्षरता के बारे में बहुत बताया गया है। हमने अपने क्षेत्र की महिलाओं को इस गीत का पूरा सार समझाया जिससे उनके अंदर साक्षर होने की भावना पैदा हुई।

अर्जुन सिंह बारड़
अनादर, सिरोही, (राज.)

'सबला' जैसी पत्रिका हमारे गांव के अनपढ़ महिलाओं और पुरुषों के भविष्य को उज्जवल बनाने वाली पत्रिका है। जब से यह पत्रिका जन शिक्षण निलियम में आ रही है, यहां के अनपढ़ लोगों में एक नई जागृति पैदा हो रही है।

अमर सिंह गुलेरिया
बभेरी, ज़िला मंडी (हि.प्र.)

हमें अनेक पाठक पत्रिका की प्रशंसा संबंधी पत्र भेजते हैं। हम उनके आभारी हैं। उनसे हमें अपनी मेहनत की सार्थकता का पता चलता है। हमारा उत्साह बढ़ता है। पाठकों के सभी पत्र हम ध्यान से पढ़ते हैं व उनके सुझावों के आधार पर आगे की रूपरेखा बनाते हैं। आपके द्वारा लिखित सभी सामग्री का स्वागत है। हम इसे पत्रिका में स्थान देने की भरसक कोशिश करेंगे।

—संपादिका

आपने महिलाओं को समाज में ऊंचा उठाने का जो संकल्प लिया है वह वस्तुतः सराहनीय है। इसके द्वारा महिला वर्ग को ही नहीं बल्कि पुरुष वर्ग को भी दक्षता और जागरूकता का संबल मिलता है। हमारे हाथ से निकली पत्रिका 15 दिन से लेकर 1 माह तक वापस मिलती है। पुरुष वर्ग के बीच भी यदि चेतना मूलक कार्य चलाया जाए तो दोनों वर्गों के सहयोग से एक आदर्श एवं शोषण विहीन समाज की स्थापना हो सकती है।

मुरलीधर
बदौसा, ज़िला बांदा (उ.प्र.)

'सबला' पत्रिका हमें मिल रही है। उसे पढ़कर बहुत ज्ञान प्राप्त हुआ। उससे आत्मविश्वास भी जागृत हुआ।

अर्चना पाटीदार
सोमा खेडी, तहसील महेश्वर

समाज में व्याप्त कुरीतियों का मुकाबिला करने का साहस इस पत्रिका को पढ़कर होता है।

सुरेश चंद्र शर्मा
खाम बाड़ी, नैनीताल (उ.प्र.)

'सबला' पढ़कर हमारा मनोबल बढ़ा है। नारी जगत में उन्नति हेतु यह पत्रिका संजीवनी बूटी का कार्य करेगी।

कमला जैन
हीरापुर, ज़िला सागर (म.प्र.)

पाठकों के सुझाव

पत्रिका में महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए उचित लेख और शामिल किए जाएं।

सुषमा श्रीवास्तव
विदिशा (म.प्र.)

पत्रिका में उन महिला संस्थानों के नाम दें जो आर्थिक और मार्गदर्शन संबंधी सामग्री आदि की सहायता कर सकें। उनका पूरा परिचय पते के साथ दिया जाए। पत्रिका को अधिकतर छोटे संगठन के सदस्य पढ़ते हैं और इस जानकारी से उन्हें लाभ मिलेगा।

नूरजहां बेगम
देवरिया (उ.प्र.)

'सबला' पत्रिका से हमें औरतों के विकास की झलक देखने को मिलती है। पत्रिका को मासिक करने का प्रयास करें जिससे महिलाएं हर महीने उससे लाभ उठा सकें।

श्रीमती मोहिंदर कौर
भांडुप, बंबई

बलात्कार की स्थिति में महिलाओं को सूझबूझ और चतुराई से काम लेना चाहिए। हर समय सतर्क रहना चाहिए। किसी भी व्यक्ति को मुंह न लगाएं। कोशिश करें कि ऐसी स्थिति ही न उत्पन्न हो। यदि घिर जाएं तो बचने का उपाय सोचें। अचानक आई विपत्ति का सामना "अबला" नहीं "सबला" बन कर करें।

यदि बलात्कारी अपने उद्देश्य में सफल हो जाता है तो चुप नहीं रहना है। इससे बलात्कारी के इरादे बुलंद होते हैं। इसकी सूचना परिवार वालों को दें। किसी के साथ जाकर पुलिस स्टेशन पर रपट लिखवाएं।

फिल्मों के अश्लील पोस्टरों के खिलाफ आज तक किसी सामाजिक संस्था ने आवाज नहीं उठाई, आंदोलन नहीं किया। सरकार भी उस पर कोई रोक नहीं लगा रही है। महिलाओं को इसके खिलाफ़ आवाज़ उठानी चाहिए।

संतोष कुमार महंत
देहला, धार (म.प्र.)

ग्रामीण महिलाओं के लिए इस पत्रिका का विशेष महत्व है। महिलाओं के स्वास्थ्य व उनके घर-परिवार से संबंधित महत्वपूर्ण सामाजिक विषयों पर भी लेख दिया करें। प्रौढ़ शिक्षा एवं महिलाओं के विकास से संबंधित विषयों पर जो कार्यक्रम विभिन्न ज़िलों में होते हैं, उनके समाचार, गतिविधियां या अन्य स्तंभ प्रकाशित करने का विचार बनाएं।

ऋषि मोहन श्रीवास्तव
दतिया (म.प्र.)

इस पत्रिका में कुछ ऐसे लेख सम्मिलित कीजिए जिससे पुरुष को अपनी उन जिम्मेदारियों का अहसास हो जिन्हें वह भूल चुका है।

किशन गोपाल सोनी
अजमेर (राजस्थान)

एक प्रश्न उठाया है दिल्ली से प्रमोद गहलौत ने।

"कुछ दिन पहले डी.टी.सी. की बस-यात्रा के दौरान एक घटना मैंने देखी। दो महिलाएं बस में चढ़ीं। उन्होंने महिलाओं की सीट पर बैठे पुरुषों से सीट खाली करने की मांग की। उन्होंने अनिच्छा से सीट खाली की। थोड़ी देर में उन्हें फिर बैठने की सीट मिल गई। कुछ देर बाद दो मज़दूर महिलाएं बस में चढ़ीं। इस बार उन दो पुरुषों ने बिना कहे उन्हें बैठने के लिए सीट दे दी।

इस पर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। एक ने पूछ ही लिया—"भाई साहब, आप में यह बदलाव कैसे आ गया?" इस पर उन्होंने कहा—"ये वो महिलाएं हैं जो अपना हक नहीं मांगतीं। इसलिए उन्हें हमने बिना मांगे सीट दे दी।"

इस घटना से मेरे मन में प्रश्न उठा कि क्या वे महिलाएं गलती पर थीं जिन्होंने अपना अधिकार मांगा या वो गलती पर थीं जो जानते हुए भी अपना अधिकार नहीं मांगतीं।

—प्रमोद गहलौत

इस प्रश्न का उत्तर बहुत सीधा और आसान है। आपने जो देखा-सुना वह अपवाद हो सकता है। जान-बूझकर पहली दो महिलाओं को चिढ़ाने के लिए किया गया व्यवहार भी हो सकता है। सदियों के अनुभव साक्षी हैं कि बिना मांगे हक़ नहीं मिलते। अगर ऐसा न होता तो दलित, पिछड़े वर्ग और महिलाओं की जो स्थिति आज है न होती। जो आंखे खुली होने पर भी नहीं देखना चाहते उनसे हमें कुछ नहीं कहना है।

सोए हुओं को जगाने की छोटी सी कोशिश 'सबला' पत्रिका द्वारा की जा रही है।

—सुहास कुमार

नहीं जानती बनाई किसने यह व्यवस्था
शायद किसी युग में रही होगी इसकी उपयोगिता
आज खो चुकी है यह अपना अर्थ
व्यवस्था बनाए रखने में हम हैं बराबर के भागीदार
चढ़ा के बेटे को सिर, रोते अपने भाग्य को
बदलनी होगी अपनी सोच, तभी बदल सकेंगे दुनिया

—सुहास

ओ बेघरबार वालो, ढूंढो एक किताब
तुम जो एक जगह थम गए हो
करो ज्ञान की खोज
तुम जो भूखे मरते हो, पढ़ो एक किताब
वही बनेगी तुम्हारा हथियार ।

—बरटोल्ड ब्रेक्त